''द विक्टिम'' और ''द ब्रेन डेड'' रचना में दलित चेतना

डॉ. निशा रामपाल, सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, गुजरात विश्वविद्यालय

शब्द ''दलित साहित्य'' उन लेखकों द्वारा लिखी गई रचनाओं को संदर्भित करता है जो दलित समुदाय के सदस्य हैं या दलित अनुभूति रखते हैं। अक्सर दलित लेखकों और समीक्षकों का मानना है कि दलित समुदाय के सदस्य होने का अनुभव व्यक्ति का अपना विशिष्ट होता है। वहीं, कई उच्च जाति समुदायों से संबंधित लेखक भी, जैसे कि मुंशी प्रेमचंद, मुल्क राज आनंद, और अरुंधति रॉय आदि, दलितों के जीवन के बारे में लेखन करते हैं और दलित जागरूकता को रोशनी में डालते हैं, दलितों की पीड़ा की ओर प्रकाश डालते हैं। हम लक्ष्य के साथ द ब्रैंडेड द्वारा लक्ष्मण गायकवाड़ और द्वारा विभावरी शिरुरकर द विक्टिम की आत्मकथाएँ पढ़ते हैं, तो हमारी नजरों के सामने उन समुदायों की जीवंत छवि सामने आती है जिन्हें ब्रांडिंग किया गया है। यह थीसिस इन दो कार्यों में पाए जाने वाले दलित चेतना का गहन अनुसंधान और विश्लेषण करने का उद्देश्य रखती है, साथ ही लेखकों द्वारा चित्रित अनुभवों की समानताओं की जाँच करने का।

कीवर्ड: दलित साहित्य, दलित चेतना, दलित समुदाय, पीड़ित, ब्रांडेड

विभावरी शिरुरकर एक लेखिका और समाजशास्त्री थीं जिन्हें ऐतिहासिक क्षेत्रों में एक प्रसिद्ध व्यक्ति माना गया था। उन्होंने उन समुदायों के जीवन की जांच की थी जिन्हें ब्रांडिंग किया गया था और जो उनके पड़ोसी इलाकों में बसे हुए थे, जिन्हें ब्रिटिश प्रशासन ने टांकेदार बना दिया था। उन्होंने इन जनसंख्याओं को विशेष ध्यान दिया और उनके जीवन का अनुसंधान किया। उनके उपन्यास 'बली', जो मराठी में लिखा गया था और फिर अंग्रेजी में 'द विक्टिम' के नाम से अनुवादित हुआ, की पृष्ठों में, महाराष्ट्र के ब्रांडिड समुदायों का जीवन प्रस्तुत होता है। उनके द्वारा प्रस्तुतित के आधार पर, महाराष्ट्र में ब्रांडिड समुदायों का जीवन व्यक्त किया गया है। उन्होंने इसे अनुभव किया कि वे ब्रांडिड समुदायों के सदस्य नहीं थे, लेकिन वे उनके द्वारा अनुभव किए जाने वाले पीड़े को महसूस कर सकती थीं, जो ब्रिटिश सरकार और अधिकारियों द्वारा एक बर्बर कृत्य के परिणामस्वरूप किए गए थे, और जिसे फिर से भारतीय सरकार और उच्च जाति के समुदायों के सदस्य अधिकारियों ने नकल किया था {1}।

लक्ष्मण माणे, जिन्हें व्यापक रूप से एक प्रमुख दलित लेखक और कार्यकर्ता के रूप में माना जाता है, नेमड़ी और ब्रांडिड लोगों के जीवन को सुधारने के पक्ष में काफी समय से अग्रणी किया जा रहा है। उपन्यासकार, उनकी आत्मकथा 'द ब्रांडिड' में अपनी समुदाय के पहले हाथ का अनुभव वर्णित करते हैं, जिसे उन्होंने पाठरूट समूह में जन्म लेने और एक अपराधी जाति के रूप में टैग किया गया है। उन्होंने इसे भी वर्णित किया है कि वे पाठरूट समूह में जन्म लिया था। इसके अतिरिक्त, 1988 में साहित्य अकादेमी अवार्ड इस आत्मकथा को उसके उत्कृष्ट काम के लिए प्रदान किया गया था।

दोनों लेखक बहुत विभिन्न सामाजिक–आर्थिक स्थितियों से उत्पन्न होते हैंय फिर भी, उनकी लेखन में दिखने वाली दलित चेतना उन्हें एक साथ जोड़ने वाली सामान्य थ्रेड की भूमिका निभाती है। इसके बावजूद कि वे दोनों लेखक हैं {2}।

अपने निबंध ''दलित साहित्य क्या है?'' में, शरतचंद्र मुक्तिबोध ने दलित साहित्य को ''दलित चेतना द्वारा उत्पन्न साहित्य'' के रूप में परिभाषित किया है। "दलित चेतना" शब्द उन व्यक्तियों की संवेदनशीलता को दर्शाता है जो दलित हैं, जिनका उद्देश्य उनके मूल्यों के संगत सामाजिक जागरूकता में परिवर्तन लाना होता है। इस दलित चेतना की विशेषता उद्दंडता की होती है, और यह आत्मविश्वास और क्रांतिकारी दृष्टिकोण के सिद्धांतों पर आधारित है। संक्षेप में, दलित जागरूकता वह भावना है जिसे दलित अपनी सामाजिक स्थिति के प्रति जागरूक होते हैं और सामाजिक और आर्थिक प्रणाली में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने के प्रयास करते हैं। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए, वे अन्यायपूर्ण सामाजिक और आर्थिक प्रणाली और इससे फायदा उठाने वाले लोगों के खिलाफ विरोध करने के लिए तैयार होते हैं। इसके अतिरिक्त, वे उन धार्मिक और सामाजिक प्रणालियों को भी नकारते हैं जिन्होंने मानवों को जानवरों से कम माना है और उन्होंने इसके बजाय क्रांतिकारी विश्वासों को ग्रहण किया जो उन्हें मानसिक और भौतिक सीमाओं से मुक्ति प्राप्त करने में सहायक होते है {3}।

दलित लेखकों का अधिकांश मानना है कि दलितों की जागरूकता वह एकमात्र जागरूकता है जिसे दलित लेखकों के साथ और अन्य लेखकों के साथ भी साझा किया जा सकता है। वहीं, अधिकांश मार्क्सवादी और उदारवादी विरोधी यह मानते हैं कि दलित जागरूकता केवल दलितों का अन्यत्र और उसका अनुभव करने वाले लोगों का नहीं हो सकता है और नहीं होना चाहिए। वे उनकी लिबरल दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं। दूसरी ओर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के दार्शनिक विचारों का पालन करने वाले लोग इस उत्तरदायित्वशील दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं। उनका मानना है कि दलित जागरूकता उन्होंने वह अनुभव

नहीं किया है, उन लोगों द्वारा साझा किया जा सकता है जो दलितों को जानने के लिए अनिवार्य नहीं होता है {4}।

जैसे कि अफ्रीकी अमेरिकन साहित्य, वैसे ही दलित साहित्य भी एक ऊँची समूह चेतना का परिणाम है जो षविशेष स्मृतियों, भावनाओं और आकांक्षाओंष के रूप में एक संदर्भ प्रदान करता है। दलित चेतना और अफ्रीकी अमेरिकन चेतना के बीच संबंध स्थापित करने के लिए एस.डी. कपूर लिखते हैं:

''जैसा कि सवर्ण चेतना जो अपने अतीत के बारे में चुनिंदा स्मरण रखने में असमर्थ थी, वहीं दलित चेतना उस समय संग्रहित करती थी जब सवर्णों द्वारा छिड़कावट के रूप में फेंके गए टुकड़े–टुकड़े। उन्हें अपने पूर्वजों की अप्रिय स्मृतियों से छुआ गया है... दलितों ने अपना इतिहास बनाए रखा और साथ ही साथ सवर्णों का भी इतिहास जीवित रखा। इनके मामले में चेतना वास्तविकता के समूचे अनुभव की पूर्ण धारणा है जो उनके विश्व–दृष्टिकोण का हिस्सा बनाती है {5}। राय तय करने की प्रक्रिया और अनुभव का मूल्यांकन चेतना से अलग नहीं किया जा सकता, हालांकि यह प्रारंभ में दिखाई नहीं देता। इस दृष्टिकोण में साहित्य में प्रकट होने वाली चेतना दलितों और अफ्रीकी अमेरिकन्स को उनकी परिस्थितियों, उस सामाजिक व्यवस्था की समझ देती है जिसका वे हिस्सा है और उसमें उनकी जगह।''

वर्ग चेतना और दलित चेतना एक जैसी नहीं होती क्योंकि ये दो अलग–अलग श्रेणियों से संबंधित होती हैं। गरीबों का अनुभव और जाति और जाति के आधार पर छूट और असमानता का अनुभव उनके द्वारा झेले जाने वाले दमन के अनुसार भिन्न होते हैं। गरीब उच्च जाति के और गरीब दलितों का अनुभव एक जैसा नहीं हो सकता। इसलिए, सावर्ण लेखकों द्वारा साझी की जाने वाली दलित चेतना की मान्यता में कठिनाई होती है। प्रोफेसर लॉरा ब्रूक दलित साहित्य के निर्माण और मूल्यांकन में दलित चेतना को महत्वपूर्ण अवधारणा मानती हैं {5}।

उन्होंने लिखा है कि दलित चेतना वह दलित चेतना है, एक अनुभवात्मक और राजनीतिक परिपेक्ष्य है जो जाति–आधारित दमन और अत्याचार के पहले हाथ के ज्ञान से बनी है, साथ ही इस अत्याचार के प्रकट होने से होने वाले राजनीतिक उद्दीपन के साथ मुक्ति प्राप्ति के लक्ष्य का भी एक केंद्रीय हिस्सा है। दलित चेतना दलितत्व के बारे में जागरूकता है साथ ही दलितों को उनके दलितत्व से मुक्ति प्राप्त करने के दृष्टिकोण का भी है। संक्षेप में, यह दलितों को उनके दलितत्व से मुक्ति पाने की दिशा में एक दृष्टि है।

विभावरी शिरूरकर की ''द विक्टिम'' और लक्ष्मण गायकवाड़ की ''द ब्रैंडेड'' में पाए जाने वाली दलित चेतना के तुलनात्मक पहलू पर प्रकाश डालने से पहले, शोधकर्ता ने सुनील रामटेके द्वारा लिखी गई शोध पत्र का संदर्भ लिया, जिसका शीर्षक था ''लक्ष्मण गायकवाड़ की ''द ब्रैंडेड'' अत्याचारी संरचनाओं के खिलाफ एक आवाज (रामटेके)''। इस दस्तावेज ने ध्यान दिया कि ब्रैंडिड जाति के सदस्यों की पीड़ा पर और प्रोटैगोनिस्ट लक्ष्मण के द्वारा असम्मानजनक सामाजिक संरचना के खिलाफ किए जा रहे विरोध को ध्यान में लिया। इसके अलावा, शोधकर्ता ने रेनु जोसान की अध्ययन लेखिका का संदर्भ भी लिया, जिसका शीर्षक था ''अत्याचार से दावाः ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'जूथन' में दलित चेतना (जोसान)।'' इस अध्ययन लेख में, रेनु जोसान ने विस्तृत विश्लेषण प्रदान किया कि ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपने जीवन में किए गए विभिन्न परिस्थितियों का विश्लेषण किया था जिससे उनमें दलित चेतना की जागरूकता हुई।

इस थीसिस का उद्देश्य दो उपन्यासों की तुलनात्मक अध्ययन पर प्रकाश डालना है जो ब्रैंडेड समुदायों के जीवन पर आधारित हैं, जिन्हें न केवल भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले बल्कि उसके बाद भी मानव अधिकारों से वंचित किया गया था। पुस्तक ''द ब्रैंडेड'' लक्ष्मण गायकवाड़ की अपनी आत्मकथा में वर्णित पहले हाथ के अनुभवों पर आधारित है, जिसे साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। दूसरी ओर, ''द विक्टिम'' विभावरी शिरूरकर द्वारा लिखी गई है जिसमें ब्रैंडेड समुदायों के अनुभवों का वर्णन है, जो लेखिका के अपने ही पहले हाथ के अनुभवों के आधार पर किया गया है। विभावरी शिरूरकर किसी भी ब्रैंडेड समुदाय से संबंधित नहीं होती हैं, फिर भी उन्होंने मुख्य पात्र आबा के अनुभवों का वर्णन किया है, जो चोरबस्ती समुदाय के सदस्य हैं। लक्ष्मण गायकवाड़ की आत्मकथात्मक पुस्तक ''द ब्रैंडेड'' और विभावरी शिरूरकर का उपन्यास ''द विक्टिम'' दोनों को तुलना या विपरीतता में तुलनात्मक विश्लेषण की आवश्यकता है {6}।

- विभावरी शिरूरकर और लक्ष्मण गायकवाड़ ने अपनी अपनी रचनाओं में दलित पहचान के गठन और समझौते का विवेचन कैसे किया है, इसे विश्लेषण करें।
- दोनों लेखकों ने अपनी कहानियों में जाति–आधारित भेदभाव के वर्णन और इसके दलित व्यक्तियों के जीवन पर प्रभाव की जांच कैसे की है, इसे जांचें।
- दोनों पाठों में दलित पात्रों द्वारा सामाजिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक सम्मानहीनीकरण के खिलाफ उन्होंने अनेक रूपों की प्रतिरोध विधियों की पहचान और विश्लेषण कैसे किया है।

- शिरूरकर और गायकवाड़ ने दलित चेतना को संवहनात्मक करने के लिए किस प्रकार की कथा–दृष्टिकोण, भाषा, प्रतीकवाद, और चित्रण की तकनीकों का मूल्यांकन कैसे किया है, इसे मूल्यांकन करें।
- विभावरी शिरूरकर और लक्ष्मण गायकवाड़ द्वारा लिखी गई ष्द विक्टिमष् और ष्द ब्रैंडेडष् को दलित साहित्य के व्यापक संदर्भ में स्थानित कैसे किया गया है, इसे जांचें।
- पाठों में दलित चेतना के रूप में प्रतिष्ठित किए गए तात्कालिक समाज–राजनीतिक प्रभावों पर चर्चा कैसे की गई है, इसे विचार करें।

विभावरी शिरूरकर की कहानी ष्द विक्टिमष् और लक्ष्मण गायकवाड़ की कहानी ष्द ब्रैंडेडष् में प्रस्तुत दलित चेतना के तुलनात्मक विश्लेषण की जांच बहुत महत्वपूर्ण है। यह अन्वेषण कि कैसे ये मौलिक काम दलित पहचान की जटिलता को संवेदनशीलता से संवादित करते हैं, जाति की अत्याचार के अनुभवों, पहचान संकटों, और प्रतिरोध की रोशनी में, दलित साहित्य को समृद्ध करने में योगदान करते हैं। समाज के सहानुभूति और क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए विचार करते हुए, ये किस्से बड़े सामाजिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं के दर्पण हैं। शैक्षिक दृष्टिकोण से, यह अनुसंधान कथा–शैली, विषय, और सामाजिक–राजनीतिक परिणामों का मूल्यांकन करके साहित्य के क्षेत्र में योगदान करता है। यह शिक्षाविदों और शोधकर्ताओं के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन है। यह वर्तमान में जाति भेदभाव और सामाजिक न्याय के सम्बंध में मोडर्न चिंतन से जुड़ता है, जो दुनियाभर में समानता और सशक्तिकरण के लिए दलित साहित्य की जारी महत्वता को उजागर करता है। यह अध्ययन पारंपरिक विचारों को चुनौती देता है और सम्मिलित कथाओं को बढ़ावा देता है जो समावेशी हैं{7}।

विभावरी शिरूरकर की 'द विक्टिम' और लक्ष्मण गायकवाड़ की 'द ब्रैंडेड' की इस तुलनात्मक साहित्यिक विश्लेषण में दलित चेतना के कई महत्वपूर्ण विषयों पर गहराई से जांच की गई है। दोनों पाठों में जाति भेदभाव की व्यापक प्रकृति को जीवंतता से वर्णित किया गया है, जिससे सिस्टमिक अत्याचार उनके दलित प्रमुखों के जीवन और पहचान को कैसे आकार देता है। विश्लेषण में प्रमुख पात्रों के पहचान गठन की यात्राओं में गहराई से जाया गया है, उनकी संघर्षों को उजागर करते हुए कि समाजिक अपेक्षाओं को व्यक्तिगत मांगों के साथ समन्वय करने की{8}।

इसके अतिरिक्त, अध्ययन में प्रमुख पात्रों द्वारा उनके दबावदायक परिवेशों में दिखाए गए क्रियाशीलता का भी विश्लेषण किया गया है। शिरूरकर और गायकवाड़ ने विभिन्न प्रतिरोध के रणनीतियाँ दिखाई हैं, व्यक्तिगत अवज्ञा के कार्यों से लेकर सामूहिक संगठन की मोबाइलाइजेशन तक, जो दलित समुदाय की प्रतिरोधशीलता और संसाधनशीलता को दिखाते हैं जीवन की चुनौतियों का सामना करते हुए। इन पाठों की तुलना करके, विश्लेषण का उद्देश्य है कि दलित अनुभवों और सामाजिक न्याय के लिए अभिलाषाओं को संवहनी करने के लिए उपयुक्त किए गए कथा तकनीकों, प्रतीकवाद, और चित्रण में समानताएँ और भिन्नताओं को खोजना है {9}।

अंततः यह तुलनात्मक पहुँच साहित्य में दलित चेतना को कैसे व्यक्त किया जाता है, इसे समझने में एक गहरी समझ प्रदान करती है, जो जाति नामकमात्र में, पहचान सम्झौता, और सशक्तिकरण के लिए रणनीतियों के अंदर भारतीय समाज के संदर्भ में अनुभवों की जटिलताओं में अन्दरूनी दृष्टि प्रस्तुत करती है।

'द विक्टिम' में, शिरूरकर द्वारा पात्र की अनुभवों के माध्यम से जाति भेदभाव की कपटी नीयत को दर्शाया गया है। उपन्यास उनको उजागर करता है कि दलितों को सिस्टमिक अलगाव और हिंसा का सामना करना पड़ता है, न केवल प्रकट रूपों में बल्कि समाजी असमानता और पूर्वाग्रहों के माध्यम से भी। जीवंत कथा और गहरे घटनाओं के माध्यम से, शिरूरकर ने जाति आधारित अत्याचार के आर्थिक, सामाजिक, और मानसिक प्रभावों को उजागर किया है जो व्यक्तियों और समुदायों पर पड़ता है। पात्र की संस्थागत भेदभाव के खिलाफ लड़ाई दलितों के हर दिन के जीवन में सामने आने वाली कठोर वास्तविकताओं का स्पष्ट चित्रण प्रस्तुत करती है {10}।

गायकवाड़ की आत्मकथा 'द ब्रांडेड' जातिवाद के एक गहरे व्यक्तिगत अनुभव को प्रस्तुत करती है, उनके अपने जीवन अनुभवों से प्रेरित होकर। उन्होंने स्पष्ट किया है कि जाति कैसे किसी के सामाजिक स्थान और अवसरों को निर्धारित करती है, जिससे शिक्षा से रोजगार के अवसरों तक हर चीज प्रभावित होती है। गायकवाड़ की कथा जातिवादी हिंसा की क्रूरता और दलित पहचान से जुड़े स्तिग्मा को उजागर करती है। उनकी कहानी में उन्होंने दलितों के सामने सिस्टमिक बाधाओं को प्रकट किया है, जो एक शत्रुतापूर्ण सामाजिक वातावरण में नेविगेट करने के लिए भावनात्मक उथल–पुथल और सहनशीलता की आवश्यकता को दर्शाती है {11}।

'द विक्टिम' में शिरूरकर के पात्र द्वारा पहचान स्थापना की एक परिवर्तक यात्रा होती है। समाजी दबावों और व्यक्तिगत अभिलाषाओं के बीच फंसा हुआ, पात्र आंतरिक शर्म और बाहरी पूर्वाग्रहों से लड़ता है। उपन्यास दलित पहचान की जटिलताओं में खोजता है, जांचता है कि पात्र कैसे व्यापक जाति आधारित भेदभाव के बीच स्वीकृति का संचार करता है। शिरूरकर महार्षि की पूर्ववृत्ति से आत्म–सशक्तिकरण तक के पात्र के विकास को कुशलतापूर्वक चित्रित करती हैं, जिससे साहस और सहनशीलता का उजागर होता है जो प्राधिकरण और गरिमा को पुनः प्राप्त करने के लिए आवश्यक होते हैं {12}।

'द ब्रांडेड' में गायकवाड़ की आत्मकथा उनके पहचान की खोज को संघटित रूप से दलितों को सीमित करने वाले समाज में सुनाती है। उन्होंने अपनी पहचान को असरकारी जातिवादी वातावरण में स्थापित करने की चुनौतियों को क्रोनिकल किया है, जहां भेदभाव जीवन के हर पहलू में निहित होता है। गायकवाड़ की कथा दलित पहचान को रूपांतरित करने में सांस्कृतिक धरोहर और समुदायिक एकता के महत्व को उजागर करती है, जिससे जातिवादी अपेक्षाओं के बीच नेविगेट करने की जटिलताओं के अंदर व्यक्तिगत समृद्धि और सामाजिक न्याय के प्रयास में दी गई समझ मिलती है {13}।

'द विक्टिम' में, शिरूरकर के प्रमुख पात्र जातिवाद के विरुद्ध विभिन्न प्रतिरोधी उपाय अपनाता है। सूक्ष्म अवाज की बाध्यता से लेकर समूहिक संगठन तक, पात्र समाजी नियमों को चुनौती देता है और अन्याय के अपराधियों से सामना करता है। शिरूरकर प्रणालीक भेदभाव के खिलाफ प्रतिरोध को एक बहुपहली प्रतिक्रिया के रूप में दर्शाती हैं, जिसमें पात्र का साहस प्रतिरोध करने में है, जबकि समुदाय के भीतर सामाजिक परिवर्तन के लिए वकालत करता है {14}।

'द ब्रांडेड' में गायकवाड़ की आत्मकथात्मक कथा उसकी व्यक्तिगत प्रतिरोध की यात्रा को दर्शाती है जो जातिवाद पर आधारित भेदभाव के खिलाफ हुई। उन्होंने व्यक्तिगत अवहेलना और समूहिक क्रियाओं के उदाहरण दिए हैं, जो दबावदार जाति व्यवस्था को चुनौती देने में समाजिक एकता के महत्व को उजागर करते हैं। गायकवाड़ की कथा में शिक्षा और जागरूकता की महत्वपूर्णता को अंगीकार किया गया है जो दलितों को प्रणालीक अन्यायों का सामना करने और उनके अधिकारों को एक समान नागरिक के रूप में दावा करने में सशक्त करती है {15}।

विभावरी शिरूरकर की ''द विक्टिम'' और लक्ष्मण गायकवाड़ की ''द ब्रांडेड'' दोनों ही दलित साहित्य में जातिवाद, पहचान निर्माण, और प्रतिरोध तकनीकों के प्रति महत्वपूर्ण दर्शन प्रदान करते हैं। ये लेखक भारत में आधारित हैं। इन लेखकों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से, न केवल उन भयानक वास्तविकताओं को प्रतिबिंबित किया है जिन्हें भारत में दलितों को सहना पड़ता है, बल्कि उनकी प्रतिकूलता और सामाजिक न्याय और समानता की दिशा में पथ प्रशंसा भी की है।

दोनों ''द विक्टिम'' और ''द ब्रांडेड'' की जांच के बाद, हम यह अनुभव करते हैं कि गांधीवादी दर्शन प्राकृतिक रूप से एक व्यक्ति के दिल में बदलाव लाने में प्रभावी होता है। इस कथा के ढांचे में, मुख्य पात्र आबा अपने आप में पूरी तरह से परिवर्तित होता है और उसे प्रेरित किया जाता है कि वह अपने गांव में और भारतीय समाज में सुधार लाए {16}। हालांकि, ऐसा लगता है कि वह अपने गांव में नेतृत्व स्थापित करने और अपनी समुदाय में और भारतीय सांस्कृतिक में बदलाव लाने में सफल नहीं रहे। लक्ष्मण गायकवाड़ के सतत प्रयासों के परिणामस्वरूप, हमने देखा कि ''द ब्रांडेड'' की प्रक्रिया में पथरुट समुदाय में हुए उन लाभकारी परिवर्तनों को {17}। हालांकि, हम इस तरह से देख सकते हैं कि भारतीय समाज में धीरे–धीरे हो रहे बदलाव को। लक्ष्मण गायकवाड़ अपने समुदाय के विकास में एक नेता के रूप में प्रकट होते हैं और ब्राह्मणीय सिद्धांतों पर आधारित सामाजिक प्रणाली द्वारा अत्याचारित समूहों के पक्ष में। इस प्रकार देखने पर हम यह निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि पात्र लक्ष्मण के पास क्रांतिकारी दलित चेतना है, लेकिन पात्र आबा के पास यह चेतना नहीं है। दूसरी ओर, विभा शिरूरकर एक सवर्ण लेखिका होने के बावजूद, उनकी कहानी ''द विक्टिम'' में हमें किसी भी सामाजिक चेतना के कोई उदाहरण नहीं मिलते हैं। उनका प्रयास ष्द ब्रांडेडष जातिगत समाज की सच्चाई को प्रस्तुत करने में प्रभावी है, और वह अपनी कोशिश में सफल भी होती है {18}।

संदर्भ

1. जेने, सी. (2011). दलितों की ष्सबाल्टर्नष के रूप में आत्म–चेतनाः दक्षिण एशिया में ग्राम्स्की पर विचार। मार्क्सवाद पर पुनर्विचार, 23(1), 83–99।
2. ओजेडए, डी. (2014)। उदात्त बनाम अचेतन का सौंदर्यशास्त्रः दलित लेखन में तुलना और विरोधाभास। डॉ. विवेकानंद झा, 3(1), 132।
3. गुरु, जी. (2000)। आधुनिकता की खोज में दलित। भारतः एक और सहस्राब्दी, 123–137।
4. गोरा, डी. के. (2014)। आत्मकथा में दलित अनुभवः सरकारी ब्राह्मण और मुदरिया का तुलनात्मक अध्ययन।

5. डेवनपोर्ट, सी., और त्रिवेदी, पी. (2013)। सक्रियता और जागरूकताः प्रतिरोध, संज्ञानात्मक सक्रियता, और 98,316 दलितों के बीच अस्पृश्यता को 'देखना'। जर्नल ऑफ पीस रिसर्च, 50(3), 369–383.
6. देसाई, एम. (2015). काले और सफेद में जातिः दलित पहचान और अफ्रीकी अमेरिकी साहित्य का अनुवाद. तुलनात्मक साहित्य, 67(1), 94–113.
7. सेन, डी. (2015). दलित राजनीति की अजीबोगरीब अनुपस्थिति पर. नई सहस्राब्दी में दलित, 45.
8. गजरावाला, टी. जे. (2012). जातिगत चेतनाः साहित्यिक यथार्थवाद और विशेषवाद की राजनीति. आधुनिक भाषा त्रैमासिक, 73(3), 329–349.
9. राजक, एस. (2016). दलित चेतना को समस्याग्रस्त बनानाः 'प्रगतिशील जातिविहीन चेतना' और जाति–विरोधी दलित चेतना के बीच संघर्ष के युद्धक्षेत्र के रूप में सद्गति. मानविकी में अंतःविषय अध्ययन पर रूपकथा जर्नल, 12(4), 1–13.
10. चटर्जी, एस. (2016). द्वंद्वात्मकता और जातिरू स्थानीय भाषा में दलित जीवन–लेखन पर पुनर्विचार, दलित आख्यानों की तुलना। तुलनात्मक साहित्य अध्ययन, 53(2), 377–399।
11. सत्यनारायण, के. (2013)। अनुभव और दलित सिद्धांत। दक्षिण एशिया, अफ्रीका और मध्य पूर्व का तुलनात्मक अध्ययन, 33(3), 398–402।
12. सगीरा, एम. पी. (2015)। बेजुबानों की आवाजः अश्वेत और दलित लेखकों की चुनिंदा आत्मकथाओं पर एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉक्टरेट शोध प्रबंध, अंग्रेजी विभाग, फारूक कॉलेज, कालीकट विश्वविद्यालय, 2016)।
13. रॉय, एम. (2010)। "स्पीकिंग" सबाल्टर्न अफ्रीकी अमेरिकी और दलितध्भारतीय साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन।
14. गेलनर, डी. एन., अधिकारी, के. पी., और बी.के., ए. (2015)। समावेश की तलाश में दलितरू नेपाल की तुलना। बी.आर. अंबेडकरः सामाजिक न्याय की खोज, 91–115।
15. गुरु, जी. (2016)। भारतीय राष्ट्र अपनी समतावादी अवधारणा में। दलित अध्ययन, 31–49।
16. मगरती, एस.एल., और राय, पी. (2016)। दलित चरित्र, वर्ग और संस्कृति का पहचान चित्रणरू दलित और गैर–दलित उपन्यासकारों द्वारा लिखे गए उपन्यासों पर तुलनात्मक अध्ययन। समकालीन शोधरू एक अंतःविषय शैक्षणिक पत्रिका, 7(1), 138–154।
17. बुवा, एम.वी.आर. (2015)। दलित साहित्यः एक समकालीन परिप्रेक्ष्य। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंग्लिश लिटरेचर एंड सोशल साइंसेज, 4(3), 895–899।
18. व्यास, ए., और पांडा, एम. (2014)। सामूहिक पीड़ितता का वास्तविकीकरणः दलित आख्यान, सामाजिक पुनर्स्थापन और परिवर्तन। मनोविज्ञान और विकासशील समाज, 31(1), 106–138.
SHRADHA EDUCATIONAL ACADEMY